तीरंदाज

■ अश्विनी भटनागर

छुटकी के साथ

छुटकी मुझे बहुत प्रिय है। मैं उसके साथ बहुत समय बिताता हूं। खासकर अपने एकांत और खामोशी का समय। वह सब जानती है और शायद इसीलिए छुटकी मेरा भाव और मन भांप कर उसमें एक क्षण में रम जाती है। वह न कोई सवाल करती है और न ही अपने मन की बात जाहिर करती है। बस मेरे प्रवाह में जैविक, प्राकृतिक रूप से शामिल हो जाती है। उसका यह भाव मुझे बहुत भाता है। जब मैं किसी सोच में होता हूं तो उसको दुलारने लगता हूं। पता नहीं क्यों गहन सोच मेरे मन में उसके लिए दुलार उत्पन्न कर देता है और मैं उसके सिर पर हाथ फेरने लगता हूं। वह गोदी में और सिमट आती है और बस एकटक सिर उठाए मेरी आंखों से मौन संवाद करती है। विचार का जब कभी तारतम्य कुछ क्षणों के लिए टूटता है, तो मैं उसकी आंखों में देख कर प्यार से मुस्करा देता हूं। उसके लिए वह पल भर की मुस्कराहट काफी है- वह समझ जाती है कि हम कह रहे हैं कि छुटकी बिटिया अब हम तुम्हे क्या बताएं, हम किस कशमकश में हैं? क्या हम कहें और तुम सुन कर क्या करोगी? हर आदमी को अपनी उलझन खुद ही सुलझानी पड़ती है। उसकी कोई क्या मदद कर सकता है।

पर छुटकी अपनी तरह से मदद हर बार करती है। चुप रह कर, खामोश समझदारी बरत कर। उसको खूब मालूम है कि किसी भी उलझन का कोई स्थायी हल नहीं है। वह समझती है कि इंसान अल्पकालिक कामचलाऊ प्रतिवचन जरूर ढूंढ़ सकता है, पर अपने हालात पर महावत की तरह अंकुश नहीं लगा सकता है। पहली कशमकश दूसरी कशमकश की जननी होती है और यह प्रक्रिया अंत तक चलती रहती है। यह वह रक्त बीज है, जो हर पल मनुष्य के मानस में नया दानव उत्पन्न करता है और उसका सारा जीवन असंख्य दानव-छायाओं से आभासी युद्ध करते हुए गुजरता है।

पर छुटकी की जिंदगी में आभासी कुछ भी नहीं है। सब कुछ वास्तविक है। इसलिए वह न तर्क करती है और न ही दर्शन की ओर जाती है। उसके लिए स्पर्श की आत्मीयता सर्वप्रधान है। स्पर्श सब कुछ कह जाता है और उसका अनुभव स्वयं में विस्तृत वार्तालाप का बोध है। छुटकी का हर स्पर्श मुझमें एक अनूठा बोध जगाता है।

छुटकी और मेरी योनि अलग अलग हैं। कहते हैं, लाखों योनियां पार करने के बाद ही मनुष्य योनि मिलती है। मैं मनुष्य योनि को प्राप्त हूं। छुटकी श्वान योनि में है। मेरे पास विवेक है। कहते हैं, पशु विवेकहीन होते हैं। मनुष्य और पशु के बीच विवेक ही सबसे महत्त्वपूर्ण भेद है। इसलिए मनुष्य जाति पशु जाति से उत्कृष्ट है। मेरे पास विवेक है और मैं अक्सर उलझनों में फंसा रहता हूं। छुटकी विवेकहीन है। उसकी सद्भावना, उसका समर्पण, अगाध प्रेम और सहज समझ मेरे

> छुटकी खिलने को आतुर है। मैं, उसको अपने मन की तरह, बांधे रहता हूं। मैं अपने डर से बंधा हूं और बेचारी छुटकी मुझसे बंधी हुई है। मैं मन की आजादी से सहम जाता हूं। छुटकी बेपरवाह है।

विवेक को अक्सर लांघ कर मुझे उस संवेदना तक ले जाते हैं, जिसमें सोच के बोझ को मैं झटक कर सिर्फ उस पल के आनंद के स्पर्श से अभिभूत हो जाता हूं। विवेक पर अनुभव की अनुभूति मुझे यकायक सरस बना देती है। सोच पिघल कर 'होने' की तरलता का एहसास जगा देती है।

छुटकी जब भी मुझे टकटकी बांधे देखती है, धीरे से और पास और फिर और पास खिसकती आती है, तो वह अपनी मूक संवेदनाओं को मुझसे संबद्ध कर निष्कर्षों के बियाबान में भटकने से बचा लेती है। वह सूंघ कर रास्ता ढूंढ़ लेती है, जबकि मैं विवेचना के झाड़ झंखाड़ में फंसा रहता हूं। हम सूंघ नहीं पाते हैं और शायद इसीलिए हमें हमेशा दिशा और दशा भ्रम रहता है। हमारा दिमाग और जुबान ज्यादा चलती है और सहज प्रवृत्ति बिल्कुल नहीं। इनके जरिए हमने अपने आप को लाचार कर दिया है।

ऐसा नहीं है कि छुटकी कोई विशिष्ट जंतु है। उससे पहले मेरी लाडो थी। उसकी तबियत को लेकर मैंने कुछ ज्यादा ही बुद्धि लगाई थी और वह अकाल ही काल का ग्रास बन गई थी। बेहद पछतावा हुआ था। लाडो की कमी बहुत महसूस होती थी, पर काफी समय तक हिम्मत नहीं हुई थी कि दूसरी बिटिया को घर ले आने का खयाल भी मन में पालें। पर एक दिन लाडो का खयाल मन से उठ कर दिमाग पर हावी हो गया। छुटकी घर आ गई। उसने हमारी गोद में बैठ कर एहसासों को फिर से हरा-भरा कर दिया। लाडो की सोच खत्म हो गई थी। उसका अनुभव फिर जी उठा था।

छुटकी कहो या लाडो, बात एक ही है। हम लोग रोज शाम को घूमने जाते हैं। सूरज के अस्त होने के कुछ पहले ही छुटकी अपनी दोपहर की नींद से उठती है और अपना पट्टा लेकर मेरे सामने खड़ी हो जाती है। अगर मैं टालमटोल करता हूं तो अपना पंजा मेरे हाथ पर बार-बार मार कर चलने का आग्रह करने लगती है। मेरे उठते ही उस पर शोखी सवार हो जाती है। बल खाती, वह कभी मेरे आगे-आगे दौड़ती है तो कभी अचानक मुड़ कर मेरे पैरों में लिपट जाती है। अगर मैं रुक जाऊं तो पलट कर वह दबे स्वर में भौंकती है। वह स्वर शिकायत का होता है- रुक क्यों गए? आओ मेरे साथ दौड़ो न! उसकी शाम की शोखी मेरे मन में भी उल्लास जगा देती है। उसका अपने पट्टे को खींचना ठीक उसी तरह होता है जैसे कभी-कभी मेरा मन अपनी सीमा रेखाओं को खींचने लगता है। मस्ती बंधन नहीं चाहती है। शोखी बेलगाम होकर ही खिलती है। छुटकी खिलने को आतुर है। मैं, उसको अपने मन की तरह, बांधे रहता हूं। मैं अपने डर से बंधा हूं और बेचारी छुटकी मुझसे बंधी हुई है। मैं मन की आजादी से सहम जाता हूं। छुटकी बेपरवाह है। उसकी अपनी वृत्ति पर भरोसा है। मुझको अपनी वृत्ति पर भरोसा नहीं है। मैं समझदार आदमी हूं, इसलिए अपने अंदर की शोखी का संज्ञान लेने से बचता हूं। कृत्रिम भोग और विलास मेरा लक्ष्य है। सब कुछ है, बस वह छुटकी वाली मस्ती नहीं है। शाम की बयार में ठुमक-ठुमक कर चलने की शोखी नहीं है।

मैं खुश नहीं हूं। छुटकी खुश है। हम दोनों साथ हैं, क्योंकि उसका मुझसे जो रिश्ता है वह मेरी इस कमी को पूरा करता है। छुटकी इंसानी दिवालियापन को जन्मजात समझती है। वह मेरी पूरकता की प्राप्ति के लिए अपनी आहुति दे रही है। पट्टे से बंधी है, पर बेबाक अंतरंगता से हर बार मेरी एक और गिरह खोल देती है। मुझे आदमी से इंसान बनाने की उसकी उत्सुकता मेरी उदासीनता को अपने पर हावी नहीं होने देती है। सही मायने में वह मेरी 'बेस्ट फ्रेंड' है।

सभी को चाहिए गांधी

जगमोहन सिंह राजपूत

इस समय अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों और बैठकों में चर्चा और चिंता के मुख्य विषय या तो हिंसा, युद्ध, आतंकवाद, हथियार, अविश्वास, पलायन आदि से संबंधित होते हैं या जलवायु परिवर्तन, जल संकट, पर्यावरण प्रदूषण, ओजोन परत, बढ़ता समुद्री जल स्तर और कई राष्ट्रों के विलुप्त होने की आशंकाओं से जुड़े होते हैं। कुछ लोगों को आश्चर्य हो सकता है कि लगभग प्रत्येक में कोई न कोई व्यक्ति गांधी को याद करता है! उसके बाद विमर्श की दिशा ही बदल जाती है। ऐसा लगाने लगता है कि आज की कठिन परिस्थितियों में भी सामान्य मानवीय प्रयासों से मनुष्य और प्रकृति के बीच की लगातार कमजोर होती कड़ी को पुनर्जीवित करना संभव है। मगर भारत ने तो गांधी के विचारों को उनके जीवनकाल के अंतिम वर्षों से ही- बिना कहे-नकारना शुरू कर दिया था। गांधी खुद भी इससे अनभिज्ञ नहीं थे।

गांधी ने चालीस वर्ष की आयु में 'हिंद स्वराज' लिखा। जिन आशंकाओं को गांधी ने अपनी दूरदृष्टि से पहचान लिया था वे चिंताजनक परिमाण में अब भारत के सामने आ गई हैं, मगर समाधान हम पश्चिम की सोच की नकल से ही पाने का प्रयास कर रहे हैं।

उन्होंने 'हिंद स्वराज' में लिखा कि : 'मेरी पक्की राय है कि हिंदुस्तान अंग्रेजों से नहीं, बल्कि आजकल की सभ्यता से कुचला जा रहा है, उसकी चपेट में वह फंस गया है। उसमें से बचने का अभी भी उपाय है, लेकिन दिन-ब-दिन समय बीतता जा रहा है।' इसके साथ ही उनकी भारत की गहरी समझ इन शब्दों में व्यक्त होती है : 'मैं मानता हूं कि जो सभ्यता हिंदुस्तान ने दिखाई है, इस सभ्यता को पाने में दुनिया में कोई नहीं पहुंच सकता। जो बीज हमारे पुरखों ने बोए हैं, उनकी बराबरी कर सकें ऐसी कोई चीज देखने में नहीं आई। रोम मिट्टी में मिल गया, ग्रीस का केवल नाम रह गया, मिस्र की बादशाहत चली गई, जापान पश्चिम के शिकंजे में फंस गया और चीन का कुछ कहा नहीं जा सकता। लेकिन गिरा-टूटा जैसा भी हो, हिंदुस्तान आज भी अपनी बुनियाद में मजबूत है।' गांधी के लिए स्वराज का अर्थ अपना शासन ही नहीं था, वह था अपने 'ऊपर ऊपर शासन'! और यह विदेशी शासन से आजादी पाने से भी कठिन चुनौती है। लेकिन रास्ते हैं।

पहला रास्ता तो यही था कि हमारे पुरखों ने भोग की हद बांध दी, 'क्योंकि अमीर अपनी अमीरी की वजह से सुखी नहीं है और गरीब अपनी गरीबी के कारण दुखी नहीं है!' दक्षिण अफ्रीका से भारत आकर गांधीजी ने गोखले के परामर्श के अनुसार भारत का भ्रमण किया, उसे जाना, पहचाना; उसी के आधार पर आगे बढ़े। वे समझ लगातार विकसित होती रही, और 7 नवंबर 1929 को उन्होंने 'यंग इंडिया' में लिखा : 'हम एक ऊंची ग्राम-सभ्यता के उत्तराधिकारी हैं। हमारे देश की विशालता और हमारी भूमि की स्थिति तथा आबोहवा, मेरी राय में; मानो यह तय कर दिया है कि उसकी सभ्यता ग्राम सभ्यता ही होगी। उसके दोष तो मशहूर हैं, लेकिन उनमें कोई ऐसा नहीं है, जिसका इलाज न हो सकता हो।'

इसके आगे उन्होंने एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण तथ्य की ओर ध्यान दिलाया था : उस समय देश की आबादी तीस करोड़ थी। उतनी 'बड़ी' आबादी के लिए और कोई विकल्प था ही नहीं, ग्राम स्वराज के अलावा! हां, विकल्पों पर तब विचार हो सकता था अगर आबादी केवल तीन करोड़ की जा सकती! क्या आज एक सौ तीस करोड़ पर आधुनिक सभ्यता और शहरीकरण का बोझ डालना सही रणनीति मानी जा सकेगी? अगर हमने अपनी योजनाओं में ग्राम स्वराज और किसान तथा मिट्टी को शुरू से ही गांधी के इच्छानुसार तरजीह दी होती, तो आज किसानों की आत्महत्याओं का 'सामान्यीकरण' न हो गया होता! किसानों का ऋण माफ करने की योजनाएं अब चुनाव घोषणा पत्रों का आवश्यक अंग बन गई हैं : चौबीस घंटे में माफ; दस दिन में माफ! बाद में क्या होता या नहीं होता है, इस पर बहसें होती रहती हैं।

यह तथ्य कोई नकार नहीं सकता है कि किसान के कष्ट और निराशाएं बढ़ती ही रहती हैं, उनके गांव उजाड़ होते जा रहे हैं! दिल्ली में हवा में जहर घुलता है, हरियाणा और पंजाब के किसान पराली जलाने के गुनहगार घोषित कर दिए जाते हैं, जेलों में डाले जाते हैं, अन्य प्रकार से भी प्रताड़ित होते हैं, मगर कोई सरकार आगे आकर उनके समक्ष पराली के वैकल्पिक उपयोग के संसाधन उचित परिमाण में उपलब्ध कराने का दायित्व लेने का कष्ट नहीं उठाती है। गांधी तो आत्मनिर्भर गांव की संरचना चाहते थे, वे उस तकनीक के भी विरुद्ध नहीं थे, जो उसमें सहायता कर सके। गुजरात के अमूल का उदाहरण बहुत कुछ कहता है। इसमें डेरी उद्योग में नई आधुनिक तकनीकी का समय की आवश्यकता और उपयोगिता के आधार पर उपयोग किया गया है। लाखों किसानों के जीवन पर इसका सार्थक और समर्थक प्रभाव पड़ा है। गांधी की इसी दृष्टि से समझना होगा। वे गतिशीलता के विरुद्ध कभी नहीं रहे, अपने सोच और विचारों में बदलाव को वे स्पष्ट रूप से स्वीकार करते थे।

संदर्भ

> आज के नीति निर्धारक अगर गांधी के विचारों को समझाने का सघन प्रयास करें, उसके मूल उदेश्य तथा लक्ष्य को पहचान सकें, तो निश्चित रूप से बदली हुई परिस्थितियों में भी समाधान निकाले जा सकेंगे, जिनमें स्वदेश, स्वराज और स्वदेशी पुनः अपना उचित स्थान पा सकेंगें।

इंदौर की एक आमसभा में 10 मई, 1935 को गांधीजी ने कहा था कि वे इस धारणा से सहमत नहीं हैं कि हिंदुस्तान की आबादी इतनी बढ़ गई है कि उसके भरण-पोषण के लिए मशीनों की आवश्यकता है। वे मानते थे कि 'हम हिंदुस्तान के छोटे-छोटे उद्योगों से करोड़ों रुपए का धन पैदा कर सकते हैं। उसमें पैसे की भी विशेष आवश्यकता नहीं है, जरूरत है लोगों की मेहनत की।' गांधीजी औद्योगिक सभ्यता के खिलाफ थे। वे ऐसे यंत्र नहीं चाहते थे, जो 'काम न रहने के कारण आदमी के अंगों को बेकार बना दें।' गांधी का विश्वास था कि जब तक व्यक्ति मशीन का मास्टर है, उसका उपयोग होना चाहिए। मगर जब मशीन व्यक्ति की बॉस हो जाएगी तब मशीन का ही शासन होगा! इससे बचाना चाहिए।

आज एआई- आर्टीफिशियल इंटेलिजेंस- का जमाना है। युवा जानते हैं कि उनकी क्या स्थिति है। रही गांव की बात, तो जब ट्रैक्टर आए, श्रम कम हुआ, मगर साथ ही साथ पशु हटे और घटे, पेड़ कटे, तालाब और अन्य जल स्रोत विलुप्त होते गए, मशीनों के कारण यह सब भी आसान होने के कारण आंख मूंद कर होता गया! मगर अब हम कहां पहुंचे हैं? हमारी कृषि भूमि से रासायनिकों के दुष्प्रभाव को निकाल पाना असंभव-सा लगता है, जलस्तर नीचे जा रहा है, खाद्य पदार्थों में जहरीली मिलावट बढ़ती ही जा रही है। आज आर्गेनिक फल, सब्जियां तीन-चार गुने दामों में लोग ढूंढ़ रहे हैं! और भी बहुत कुछ नियंत्रण से बाहर जा रहा है। सरकारें चीन के लिए बाजार खोल देती हैं, वे सस्ते माल से बाजार को पाट देते हैं। जनता से अपेक्षा की जाती है कि वह चीनी माल न खरीदे! यह कैसी विडंबना है? कहां गए वे दस्तकार, कारीगर जो अंतिम पंक्ति में खड़े थे और जिनके लिए गांधी हर पल चिंतित रहते थे?

'हिंद स्वराज' के तीस वर्ष बाद गांधीजी ने स्वयं कहा कि अगर मैं हिंद स्वराज पुनः लिखूं, तो कुछ शब्द बदल दूंगा, मगर मूल भावना और संकल्पना तो वही रहेगी। आज के नीति निर्धारक अगर गांधी के विचारों को समझाने का सघन प्रयास करें, उसके मूल उदेश्य तथा लक्ष्य को पहचान सकें, तो निश्चित रूप से बदली हुई परिस्थितियों में भी समाधान निकाले जा सकेंगे, जिनमें स्वदेश, स्वराज और स्वदेशी पुनः अपना उचित स्थान पा सकेंगें।

अपना पक्ष रखना जरूरी है

वक़्त की नब्ज़

■ तवलीन सिंह

कुछ बातें हैं, जो हम 'सेक्युलर' मिजाज के पत्रकार कहने से डरते हैं, खासकर हिंदुत्व के इस दौर में। मिसाल के तौर पर अकबरुद्दीन ओवैसी ने जब हिंदुओं का मजाक उड़ाया हाल में दिए गए एक भाषण में, तो उसको हमने अनसुना कर दिया। निजी तौर पर मुझे बहुत तकलीफ हुई जब हैदराबाद के इस आला राजनेता ने कहा कि 'कितने खुदा हैं इनके, रोज एक नया खुदा पैदा कर देते हैं न'। मगर मैंने भी इस भाषण के बारे में नहीं लिखा। आज भी शायद उन दो वीडियो क्लिप को देख कर चुप ही रहती, जो मैंने पिछले हफ्ते सोशल मीडिया पर देखे थे। जिक्र अगर उनका कर रही हूं तो सिर्फ इसलिए कि उनका सीधा रिश्ता है जम्मू-कश्मीर से। पहला वीडियो पाकिस्तान का है। इसमें दिखते हैं छोटे बच्चे, जो एक लाइन में खड़े होकर अपने से थोड़े बड़े बच्चे को मुस्कुरा कर गले मिल रहे हैं। यह बच्चा फिर अपने आप को नकली मानव बम बना कर गिर पड़ता है बच्चों से थोड़ी दूर जाकर। बैकग्राउंड में सुनाई देती हैं कुरान की आयतें।

दूसरा वीडियो इराक से था, जिसको बनाया गया था अबु बकर अल-बगदादी की हत्या के अगले दिन। इसमें दिखती हैं काले बुर्कों में कई सारी औरतें, जिनकी सिर्फ आंखें दिखती हैं, क्योंकि उन्होंने अपने हाथों को भी काले दस्तानों से ढक कर रखा है। ये औरतें मातम करती हैं बगदादी के लिए, यह कहते हुए कि उनको यकीन है कि नया खलीफा आएगा बगदादी की जगह लेने, क्योंकि अल्लाह की मर्जी है कि दुनिया में एक भी काफिर जिंदा न रहे। कश्मीर से रिश्ता यह है कि इस किस्म का इस्लाम काफी सालों से फैलने लगा है कश्मीर घाटी में और इतना प्रभाव रहा है इसका कि घाटी का मजहबी चेहरा भी बदल गया है और 'आजादी' की लड़ाई का मकसद भी। अब मकसद आजादी नहीं है, मकसद बन गया है कश्मीर घाटी में शरीअत नाफिस करना। कहने की जरूरत नहीं, लेकिन कहना जरूरी भी है कि भारत किसी हाल में अपनी भूमि पर एक इस्लामी खिलाफत को कायम होने नहीं दे सकता है।

समस्या यह है कि बहुत सालों से इसके लिए जिहाद चल रही है कश्मीर घाटी में और इसको न कश्मीरी राजनेता रोक सके हैं, न दिल्ली के राजनेता। पिछले हफ्ते जिस दिन जम्मू-कश्मीर का राज्य होना कानूनी तौर पर हटाया गया, कांग्रेस के वरिष्ठ कश्मीरी राजनेता गुलाम नबी आजाद ने

> मोदी सरकार की प्राथमिकता होनी चाहिए दुनिया के सामने साबित करना कि अनुच्छेद 370 को हटाए बिना कश्मीर घाटी से जिहादी आतंकवाद को रोकना तकरीबन असंभव था। जिहादी आतंकवाद और जिहादी सोच सिर्फ भारत के लिए समस्या नहीं है, पूरी दुनिया के लिए है।

कहा कि कश्मीर समस्या पैदा हुई है सिर्फ 2014 के बाद। यानी दोष सारा नरेंद्र मोदी का है। झूठ है यह। आजाद साहब अच्छी तरह जानते हैं कि कश्मीर समस्या 1947 में पैदा हुई थी और जिंदा रही है आज तक कांग्रेसी प्रधानमंत्रियों की गलत नीतियों के कारण। मोदी की गलती सिर्फ एक है कि उन्होंने अनुच्छेद 370 हटाए जाने के बाद उसको हटाने के कारण दुनिया के सामने नहीं रखे हैं। दुनिया के बड़े राजनेताओं को समझाने की खुल कर कोशिश नहीं की है कि वर्तमान स्थिति यह है कश्मीर घाटी में कि आइएसआइएस किस्म की खिलाफत कायम करने की कोशिश कर रहे हैं जिहादी आतंकवादी।

ऐसा करने के बदले पांच अगस्त के बाद मोदी सरकर का ध्यान ज्यादातर अटका रहा है इस बात को साबित करने में कि अब कश्मीर घाटी में हालात बिलकुल 'नॉर्मल' या सामान्य हो गए हैं और आम लोग बहुत खुश हैं, उनके राज्य की बदली हुई स्थिति को देख कर। इस झूठ को सच साबित करने के मकसद से यूरोप के कुछ सांसदों को कश्मीर ले जाया गया पिछले हफ्ते। वहां से लौटने के बाद उनमें से कई थे, जिन्होंने कहा कि उनको अगर घाटी का दौरा करने की इजाजत मिली है, तो भारत के विपक्षी राजनेताओं को भी मिलनी चाहिए। कइयों ने स्वीकार किया कि अनुच्छेद 370 को हटाना भारत का अंदरूनी मामला है, लेकिन यह भी कहा कि कश्मीर के राजनेताओं को इतने महीने नजरबंद रखना ठीक नहीं है। ऊपर से अपने देश के मीडिया में सवाल उठने लगे हैं कि इस यूरोपीय पर्यटन के लिए पैसे किसने दिए थे। इस तरह की कोशिशें अक्सर नाकाम रहती हैं इस दौर में, जब सोशल मीडिया पर आम इंसान अपनी बातें रख सकते हैं जब चाहें।

दुनिया जानती है कि कश्मीर घाटी में अभी तक स्थिति सामान्य नहीं है। दुनिया जानती है कि वहां के तकरीबन सारे बड़े राजनेता अभी तक नजरबंद हैं। दुनिया जानती है कि घाटी में तीन महीनों से बच्चे स्कूल नहीं जा पाए हैं। दुनिया जानती है कि कश्मीर में हर दूसरे दिन कर्फ्यू लग जाता है। दुनिया जानती है कि सेल फोन सेवाओं से अभी तक ज्यादातर लोग वंचित रखे गए हैं। दुनिया यह भी जानती है कि घाटी के कई हिस्सों में अभी तक जिहादी संस्थाओं का बोलबाला है। यही कारण है कि बाहर से आए मजदूरों की निर्मम हत्याएं हुई थीं हाल में, ताकी खौफ का माहौल बना रहे।

सो, मोदी सरकार की प्राथमिकता होनी चाहिए दुनिया के सामने साबित करना कि अनुच्छेद 370 को हटाए बिना कश्मीर घाटी से जिहादी आतंकवाद को रोकना तकरीबन असंभव था। जिहादी आतंकवाद और जिहादी सोच सिर्फ भारत के लिए समस्या नहीं है, पूरी दुनिया के लिए है। भारत सरकार ने अपना पक्ष अभी तक पूरी तरह रखा नहीं है, सो फिलहाल पाकिस्तान बाजी जीत रहा है।

चुपाय मारो दुलहिन

दीपावली आई तो यूपी सरकार ने रिकार्ड संख्या में दीपक जलाने का अपना ही पुराना रिकार्ड तोड़ डाला!

गिनीज बुक वाले भी क्या करते! इस बार राम की पैड़ी पर पांच लाख इक्यावन हजार दीपक जलाए गए थे। इससे पहले तीन लाख से ऊपर दीये जलाने का रिकार्ड बनाया था। इस बार सीधे पांच लाख से ऊपर। अगली बार शायद दस लाख हों, क्योंकि तब तक अयोध्या सबंधी 'फैसला' भी आ चुका होगा!

हिंदी वाले चैनल तो अयोध्या के नाम मात्र से ही भक्तों की तरह रोमांचित हो उठते हैं। इस बार कई अंग्रेजी चैनल भी अयोध्या के भक्त हो गए। ऐसे में इतने सारे दीपकों के जलने से होने वाले प्रदूषण पर सवाल कोई क्यों करता?

ऐसे अवसरों पर कई एंकर अचानक साड़ी, बिंदी वाली हो उठती हैं। और कई एंकर सूट छोड़ कुर्ता, जाकेट में आ जाते हैं, मानो सब थोड़ा-थोड़ा हिंदू बन जाते हैं।

'जैसी बहै बयार पीठ तब तैसी दीजै' इसी को कहते हैं। इन दिनों वे सीन में अपने को ही पूरी तरह डुबो देते हैं, ताकि प्रभुजी की कृपादृष्टि उन पर किसी तरह पड़ जाए!

दिवाली बीती ही थी कि फोकस में कश्मीर आ गया। यूरोपीय संघ के सत्ताईस सासंदों का मन कश्मीर देखने को मानो मचल उठा और हमारे कुछ चैनल उनकी आगमनी करने में लगे रहे। लेकिन आपसी प्रतिस्पर्धा जो न कराए सो थोड़ा। देखते-देखते सत्ताईस देवताओं का कश्मीर दर्शन कामेडी बन गया।

जो कथित रूप से कश्मीर की जनता का हालचाल जानने गए थे, वे हमें डल झील के शिकारों में बैठ सैर करते, ठहाके लगाते दिखे। बाद में कुछ एंकरों ने बताना शुरू किया कि सत्ताईस देवता कहे हैं कि कश्मीर में आतंकवाद का खतरा है, यों सब ठीक-ठाक है।...

वे शिकारे में बैठ मस्ती करें और हमारा विपक्ष हवाई अड्डे से ही वापस कर दिया जाए? कई न्यायप्रिय चैनलों को यह अन्याय काफी बाद में समझ में आया और बाकी की कसर विपक्ष की चोटों ने पूरी कर दी।

पहली बार सत्ता पक्ष के प्रवक्ता-जन हकबकाते दिखे। लोग पूछते रहे कि सरकार कहती रही है कि कश्मीर हमारा अंदरूनी मामला है, तब इसका इस तरह से अंतरराष्ट्रीयकरण क्यों किया जा रहा है? किसने इस टूर को फाइनेंस किया है? सरकार से उसका क्या रिश्ता है?

इन सवालों का कोई सटीक जवाब प्रवक्ताओं के पास नहीं दिखा। पहली बार कुछ भक्त एंकर भी कश्मीर को लेकर की जाती इस अनीति की निंदा करते दिखे।

और धन्य हैं हमारे चैनल! जब कभी ये किसी के पीछे

बाखबर

■ सुधीश पचौरी

> दिवाली बीती ही थी कि फोकस में कश्मीर आ गया। यूरोपीय संघ के सत्ताईस सासंदों का मन कश्मीर देखने को मानो मचल उठा और हमारे कुछ चैनल उनकी आगमनी करने में लगे रहे। लेकिन आपसी प्रतिस्पर्धा जो न कराए सो थोड़ा।

पड़ जाते हैं, तो बड़े से बड़े की ऐसी की तैसी कर देते हैं। यही हुआ। एंकरों ने पूछना शुरू कर दिया कि इस टूर की आयोजिका स्वनामधन्या 'मादी शर्मा जी' आखिर हैं कौन? सरकार की वे हैं कौन?उनको सीधे अंदर तक पहुंच रखने का हक किसने दिया?

एक चैनल ने स्वनामधन्या के पते पर छापा मारा, ताकि प्रामाणिक खबर दे सके, लेकिन उनका दफ्तर उसे बंद मिला। किसी ने उनको बताया कि यह हफ्ते बाद खुलेगा!

इसे कहते हैं 'होम करते हाथ जला लेना'!

पहली बार एक 'ऑफिशियल'-सा दिखता, पर 'अनऑफिशियल' बताया जाता 'शो' एकदम 'प्लॉप' नजर आया। सत्ताईस देवता कब विदा हो गए इसकी खबर तक न बनी!एक चर्चक ने अफसोस जताया कि ये लोग 'पीआर' तक कायदे से नहीं कर सकते! एक ने तो इसे 'कठपुतली शो' भी कहा!

इस बीच हरियाणा में तो सरकार बन गई, लेकिन महाराष्ट्र में लटकी रही। एक दिन खबर आती कि शिवसेना मान गई है, फिर अगले दिन खबर टूटती कि जी नहीं, वह तो फिफ्टी-फिफ्टी पर अड़ी है। सारी निगाहें शिवसेना के संजय राउत के बोलने पर लगी रहीं।

फिर एक सुबह कई चैनल खबर देते रहे कि भाजपा-शिवसेना के बीच सब कुछ तय हो चुका है। शिवसेना को डिप्टी सीएम के साथ तेरह मंत्रालय और मिलने वाले हैं, लेकिन शाम आते-आते संजय राउत फिर भाजपा को फिफ्टी-फिफ्टी के वादे की याद दिलाते दिखे और शुक्रवार की सुबह की खबर यह आई कि शिवसेना के संजय राउत शरद पवार से मिले हैं। उन्हीं के हवाले से एक चैनल ने यह खबर भी दी कि शिवसेना के पास दो तिहाई बहुमत है!

परिणाम चाहे जो हो, इतना तो स्पष्ट है कि शिवसेना ने भाजपा की अकड़ ढीली कर दी है।

इसी दौरान पीएमसी बैंक घोटाले की कृपा से छठा खाताधारक भी स्वर्ग सिधार गया। बहुत से खाताधारक आजाद मैदान में धरना देते रहे, प्रोटेस्ट करते रहे, लेकिन अभी तक किसी एक बड़े केंद्रीय नेता के कान पर जूं नहीं रेंगी! न किसी ने भरोसा दिया कि जमा रकम खाताधारकों को वापस मिलेगी। रिजर्व बैंक को कारगर हस्तक्षेप करना था, जो अब तक नहीं किया गया। यह कैसी वित्तीय व्यवस्था है? कौन-सी बैंकिंग प्रणाली है कि लोग अपने ही पैसे के लिए तरस रहे हैं और जो अपने आर्थिक संकट को सह नहीं पा रहे और तिल तिल करके मर रहे हैं!

वृहस्पतिवार की सबसे बड़ी खबर इजरायल के एनएसओ द्वारा कई भारतीय पत्रकारों, मानवाधिकार कार्यकर्ताओं तथा दलित एक्टिविस्टों के वाट्सऐप की जासूसी ठहरी! एक चैनल जासूसी के शिकार चार लोगों के पास जा पहुंचा, जो बोले कि हमसे कहा गया है कि कुछ न बोलें।

यानी 'चुपाय मारो दुलहिन, मारा जाए कौआ!'